Multidisciplinary International Journal http://www.mijournal.in

(MIJ) 2015, Vol No 1, Jan-Dec **e-ISSN: 2454-924X; p-ISSN: 2454-8103**

SOCIAL SENSITIVITY IN SANSKRIT NEW SONGS

Dr. Neeraj Kumari

Associate Professor, Sanskrit Department

Thakur Biri Singh Degree College Tundla, Firozabad, India

संस्कृत नवगीत में सामाजिक सम्वेदना का अभिपुट

डॉ नीरज कुमारी

सह . आचार्य, संस्कृत विभाग, ठाकुर बीरी सिंह महाविद्यालय, टूंडला, फिरोजाबाद, भारत

ABSTRACT

It is the important duty of the creator to describe in his work such a way for the salvation of the human being, which will benefit the individual and the country. Since the infancy of literature-writing, the creators have discharged the social responsibility of literature with the responsibility of their responsible writing work. Socially appropriate-inappropriate, necessary-unnecessary and culturally its usefulness in the writings done so far has been remembered. If we look at the Sanskrit literature from this point of view, then it will be known that from the Vedas till today, how can a person be made the best from the social point of view? This has been described over and over again and in a variety of mediums and styles. Modern writers are also discharging this tradition with full responsibility.

सारांश

कृतिकार का महत्त्वपूर्ण कर्त्तव्य है कि वह अपनी कृति में मानव उद्धार हेतु ऐसा वर्णन करे जिससे व्यक्ति विशेष का एवं देश का कल्याण हो।साहित्य–लेखन के शैशवकाल से ही रचनाकारों ने अपने दायित्वपूर्ण लेखनकार्य से साहित्य के समाजिक दायित्व का जिम्मेदारी के साथ निर्वहन किया है। अभी तक हुए लेखन–कार्यों में सामाजिक दृष्टि से उचित–अनुचित, आवश्यक–अनावश्यक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से उसकी उपादेयता इत्यादि का स्मरण रखते हुए उसे मूर्त रूप दिया जाता रहा है। यदि इस दृष्टि से संस्कृत साहित्य पर दृष्टिपात करें तो ज्ञात होगा कि वेद से लेकर आज तक सामाजिक दृष्टि से व्यक्ति को श्रेष्ठ से श्रेष्ठतर कैसे बनाया जा सकता है, इसी का वर्णन बार–बार एवं विभिन्न माध्यमों एवं शैलियों में किया गया है। अर्वाचीन साहित्यकार भी इस परम्परा का पूर्ण दायित्व के साथ निर्वहन कर रहे हैं।

परिचय

1885 ई. में भारतीय राष्ट्रीय महासभा की स्थापना के साथ ही इंग्लैण्ड द्वारा बलात् आरोपित किया गया। आंग्ल राष्ट्रगीत के विरोध स्वरूप भारत की स्वेदशी भाषाओं ने एक स्वर से ***बंकिम चन्द्र चटर्जी*** *के* ***'आनन्द मठ'*** *नामक उपन्यास के अंश* ***'वन्देमातरम्'****शीर्षक गीत को राष्ट्रगीत की उपाधि से विभूषित किया। संस्कृत, भारत*

*की आत्मा है एवं गौरव है उसकी पहचान। अतः संस्कृत भाषा में निबद्ध 'वन्दे मातरम्' गीत को राष्ट्रगीत का गौरवान्वित पद प्राप्त होने से न केवल संस्कृतज्ञ अपितु समूचा देश गौरवान्वित हुआ है। यह अलग बात है कि कालान्तर में स्वतंत्र भारत में विधानसभा की स्थापना के साथ ही तत्कालीन उपसमिति ने **रविन्द्र नाथ ठाकुर** विरचित **'जनगण मन'** को अधिक उपयुक्त माना। राष्ट्रीय महत्व की दृष्टि से उक्त दोनों गीतों में भेद बुद्धि अपनाना संकुचित मानसिकता का पर्याय होगा। अतः संस्कृत प्रेमियों ने उसे अत्यन्त आदरपूर्वक आत्मसात् किया। यह गीत भारत के आन्तरिक और बाह्य सौन्दर्य को व्यक्त करता है।*

*उपर्युक्त ऐतिहासिक उल्लेख से यह स्पष्ट होता है कि **'राष्ट्रगीत'** राष्ट्रीय गीत से सर्वथा पृथक् है। राष्ट्रीय गीतों का सम्बन्ध राष्ट्रीयता के किसी अंग विशेष से होता है और उनमें जातीय जीवन और संस्कृति का प्रतिफलन होता है। अतीत के प्रति मोह, वर्तमान की करुण स्थिति एवं भविष्य के प्रति आशा तथा जन्मभूमि के प्रति प्रेम, असीम श्रद्धा एवं निष्ठा आदि की अभिव्यक्ति इस प्रकार के काव्य में होती है। देश और उस भू–भाग विशेष में रहने वाली जाति के प्रति समता व सुरक्षा का भाव ही राष्ट्रीय गीतों की रचना का मूल हुआ करता है।*

संस्कृत भाषा में राष्ट्रीय गीतों की रचना ऋग्वेद, पुराण और महाकाव्य काल से लेकर अद्यावधि सतत रूप से अबाधित रही है। ऋग्वेद, पुराण, महाकाव्य आदि में राष्ट्रीय गीत, काव्यों के गीतात्मक अंश के रूप में समाहित हैं। प्राचीन संस्कृत साहित्य में स्वतन्त्ररूप में राष्ट्रीय गीत प्राप्त नहीं होते।

*अर्वाचीन संस्कृत काव्य में साहित्य के सामाजिक दायित्व का निर्वाह करते हुए **'राष्ट्र की रक्षा'** हेतु भारत की पराधीन दशा का मर्मस्पर्शी वर्णन किया गया है। स्वतन्त्रता संग्राम के दिनों में सन् 1930 ई० में डॉ. भट्ट मथुरानाथ शास्त्री द्वारा रचित काव्य **'साहित्य वैभवम्'** में कतिपय देश–प्रेम विषयक गीतों का वर्णन हुआ है। भारत भूमि की दिव्यता को प्रकट करने वाला एक गीत इस प्रकार है–*

अहो श्री भारताभिख्योऽति मुख्यो।
दिव्य देशोऽयम्, अपि ध्यायेत सुरेशोऽयं स भूमेः।
सन्निवेशोऽयम्। हिमाद्रिः प्रोन्नते मौलो
चामरं सच्चामरं धत्ते।
उदन्वद्धौत पादाब्जो नरेशानां नरेशोऽयम्।।[2]

वैदेशिक साम्राज्य जनित, पीड़ा को अभिव्यक्त करते हुए कवि कहते हैं कि कौन से गुणों का गान करूँ? कौन से ऐसे गीत गाऊँ जिससे मैं इस पराधीनता से मुक्त हो जाऊँ। अपने देश के विषय में क्या कहूँ ऐसा लगता है मैं भी विदेशी ही हूँ। कवि के हृदय में स्वतन्त्रता–प्राप्ति की तीव्र इच्छा है, इसीलिए वह अपनी इच्छा इन भावों के रूप में अभिव्यक्त कर रहा है–

कियद् गीतानि गायामो
न तृप्यामो गुणैः किन्तु,
करेणाऽऽपाद्यतेदानीं
स्वदेशो हा विदेशोऽयम्।।[3]

*आचार्य परमानन्द शास्त्री कृत **'स्वरभारती'** नामक गीतिसंग्रह में राष्ट्र–प्रेम विषयक विविध भावों की अभिव्यंजना हुई है, यथा–**राष्ट्रवन्दना, ऐक्यभावना, समसामयिकी समस्या और नवचेतना की आकांक्षा के भाव** निहित हैं। कवि ने देश के प्रति अपना अनुराग प्रदर्शित किया है, यथा–*

जन्म कश्मीरकेरलान्ध्रमध्ये क्वचिद्,
देशे एकोऽस्ति नः केवलं भारतम्।
अंगरूपाः प्रदेशाः दधति चारुतां
हस्तपादं यथा काम–विषये गतम्।
देश ऐकोऽस्ति नः केवलं भारतम्।।[4]

कवि देश में व्याप्त समस्याओं का समाधान कर भारतवर्ष को अपनी कल्पनाओं के अनुकूल देखना चाहता है। देश सुधार के लिए नागरिकों की जागरुकता आवश्यक है। इसलिए उन्होंने समकालिक कवियों से परम्परा से हटकर कुछ नया लिखने का आग्रह किया हैं। कवियों को सम्बोधित करते हुए वह कहते हैं कि कवियों! कुछ ऐसा रचो जिससे भारतीय जनता के नेत्र खुलें। दिशाविहीन हो रहे युवा विकारों से बचें। पथभृष्ट हो रहे लोगों को सचेत करो। ऐसा सामाजिक तथ्य इस गीत के माध्यम से स्पष्ट हो रहा है–

कविवर!रचय किमपिनवगानम्,
युगे युगे बहु गीतं रमणी–
रूपं मित्र! 'नेत्र–'निर्वाणम्'।
पथि पथि विलपति मुग्धबालता
यौवनमुत्पथि दिशाविहीनम्,
क्षीणाशं वार्धक्यमुपनतं
यथोत्तरं जीवनमतिदीनम्।
उदियाल्लय स्तादृशो लोके
विलयमियाद दुर्बुद्धि–वितानम्।
कविवर! रचय किमपि नवगानम्।।[5]

*इसके अतिरिक्त **'देश एकोऽस्ति नः केवलं भारतम्', 'भारतीय स्वतन्त्रता', 'जयति भारतम् एवं 'वयं भारतीयाः'** आदि शीर्षकों में कवि ने स्वदेश के हित की कामना की है।*

*आचार्य श्रीनिवास रथ प्रणीत **'तदेव गगनं सैव धरा'** गीतसंग्रह के गीत, स्वहित की कामना से ऊपर उठकर जनकल्याण व स्वदेश प्रेम की भावनाओं को व्यक्त करते हुए लिखते हैं–*

शंकर ! तव वन्दनारविन्द–मकरन्द–मधुर–भाषितं विजयते।
रागजनित–कटुताऽऽकुल–जनता–परितापं
हरते।।
विभाति केरलभुवि पदयुगलं
हिमगिरि–मौलिचुम्बि मुखकमलम्।
पूर्वापर–दिग्भाग–सागरं
स्पृशतस्तव बाहू निरन्तरम्।।
सुपरिचिताऽखिल–भारतीयता
भवति प्रकाशते। शंकर तव।।[6]

'रक्ष तद् भारतम्' *नामक गीत में भारत की महिमा का वर्णन कर उसकी रक्षा की कामना की गई है। जहाँ वेदवाणी प्रकाशित है, जहाँ ऋचाओं से यजु, सामगान और अथर्व सवंर्धित हैं। जहाँ देववाणी संस्कृत मातातुल्य पूजी जाती है। जो विश्वभर की भाषाओं में सर्वाधिक प्रसिद्ध है। जहाँ वाल्मीकि का अद्भुत काव्य रचित है, ऐसे भारत की हमें पूर्ण यत्न से रक्षा करनी चाहिए। जैसा कि प्रस्तुत गीत में दर्शनीय है–*

वेदभाग्भासुरा यत्र विश्वम्भरा
ऋग्यजुः सामकाथर्वसंवर्धिता।
विश्वभाषासु या सर्वसम्मानिता
देववाणी शुभा यत्र वाक्संस्कृता।।
यत्र वाल्मीकिना क्रोंचशोकाश्रुणा?
लोकवृत्ताद्भुतं काव्यमुद्भासितम्।
व्याससम्पादितं यत्र गीतामृतं?
रक्ष सर्वात्मना रक्ष तद् भारतम्।।[7]

आचार्य रमाकान्त शुक्ल द्वारा रचित काव्य ***'जय भारत भूमे'*** *में देशके प्रति क्षोभ व्यक्त करते हुए कवि ने अपनी हार्दिक इच्छा प्रकट की है कि मातृभूमि देशद्रोहियों, तस्करों, दस्युओं, एवं आतंकवादियों से रहित हो। देश में व्याप्त अशिक्षा, वधूदहन एवं आतंकवाद इत्यादि समस्याओं से रहित हो तथा शिक्षा का प्रचार–प्रसार हो। कवि इन सबको देश के विनाश.का साधन मानता है और बुराईयों के लुप्त होने की कामना करता है।*

कवि को पूर्णरूपेण आशा है कि देश से अपकीर्ति का लोप अवश्य होगा–

नितान्तं विहीनः कदाचित्तु यः स्याद्
गृहस्फोट कैर्दस्युभिः षिड्ग सङ्घैः
तथा वंचकैस्तस्करैर्भृष्ट कृत्यैः
भजेऽहं मुदा भारतं तं स्वदेशम्।

भजेतं मुदा भारतं दिव्य स्वदेशम्।।
बलात्कार हत्यापहार प्रहाराः
अशिक्षा वधूदाह शिक्षाप्रचाराः।
कदाचित्तु लुप्ता भविष्यन्ति यस्मात्
भजेऽहं मुदा भारतं तं स्वदेशम्
भजेऽहं मुदा भारतं तं स्वदेशम्।।[8]

आचार्य भास्कराचार्य त्रिपाठी प्रणीत ***'निर्झरिणी' (निलिम्प काव्य)*** *के* ***'जृम्भारते जृम्भारते'*** *नामक गीत में कवि ने भारत भूमि की रक्षा हेतु भारतवासियों को सावधान करते हुए प्रार्थना की है कि हमारे देश पर जो तीक्ष्ण (पैने)दाँत गड़ाये हुए हैं, उन शत्रुओं को नष्ट करो। बन्धुओं जाग जाओ और देश की रक्षा करो। देश में बलात्कार, हत्यायें प्रहार, अशिक्षा, वधूदहन जैसे अपराध हो रहे हैं, इनको समाप्त करने के लिए शिक्षा का प्रचार करो और यदि ये समस्याएँ समाप्त हो जायेंगी तो निश्चय ही भारत देश की विजय होगी, कल्याण होगा ऐसा वर्णन इस गीत में दृष्टिगोचर होता है–*

पश्य बन्धो क्षणं तीक्ष्णदन्ता अमी
विष्टरे तावके मत्कुणाः शेरते
अद्य किं शास्ति कः सस्मितो भाति कः
वाजिनष्वापि विक्रीय निद्राति कः
वृत्त पत्रेषु बालार्कमन्वेषयन्
कश्च जागर्ति जृम्भारते जृम्भारते।।[9]

'जय भारत भूमे' *आचार्य रमाकान्त शुक्ल द्वारा रचित देश प्रेम विषयक द्वितीय गीत काव्य है। इसमें सात शीर्षक हैं, यथा–* ***'भारत भूमे', 'भजे भारतम्', 'मम भारतं विजयते', 'भारत भूतिर्विलसति', 'भारताख्य स्वदेशः', 'जय भारत मेदिनी विश्वनुते', 'दिव्य मम भारतम्'*** *इस गीत ग्रन्थ में आद्योपान्त भारत भूमि की महिमा का गान है। कवि ने देश का गुणगान किया है कि मेरा प्रिय भारत जिसकी प्रशंसा में यहाँ के भारतवासी नए–नए गीत गाते हैं। ऐसी पवित्र मातृभूमि की जय हो, यथा–*

मदीयः स्वदेशः प्रियं भारतं मे
मदीया प्रिया मातृभूमिः पवित्रा।
इतीत्थं त्रिलिङ्ग्यां जनैर्गीयते यो
भजेऽहं मुदा भारतं तं स्वदेशम्
भजेतं मुदा भारतं दिव्य देशम्।।[10]

देश की महिमा पर गर्वित कवि रमाकान्त शुक्ल बारम्बार नमन कर कीर्तन करते हुए कामना करते हैं कि उनका देश अनवरत वृद्धि व शोभा को प्राप्त करे जैसा कि इस गीत में दर्शनीय है–

प्रणम्यः प्रणम्यो मया यः स्वदेशः
सदा कीर्तनीयः सदा वन्दनीयः।

सदा वर्धतां मोदतां राजतां यो
भजेऽहं मुदा भारत तं स्वदेशम्।
भजेतं मुदा भारतं दिव्य देशम्।।[11]

*कवि देश के उन दुर्लभ गुणों को अभिव्यक्त करता है जिसके कारण देश का यश संसार में फैल रहा है। जहाँ मनुष्य की सेवा करना ही परम कर्तव्य है, जहाँ स्वयं बुभुक्षा होने पर भी दूसरे को भोजन देकर तृप्त करना अर्थात् आत्मसंतुष्टि प्राप्त करना ही परम धर्म है। ऐसी **'वसुधैव कुटुम्बकम्'** की भावना रखने वाले देश को शत् शत् नमन है–*

कुटुम्बं धरित्री दया यस्य मित्रं
मनुष्यत्व सेवा यदीयोऽस्ति धर्मः।
असत्यं च शत्रुः समस्तेऽपि लोके
भजेऽहं मुदा भारतं तं स्वदेशम्।
स्वकीयां बुभुक्षां पिपासां नियम्य
सदा रक्षिता येन भीताः प्रपन्नाः।
यमाहुर्विदग्धास्तथा शान्तिदूतं
भजेतं मुदा भारतं दिव्य देशम्।।[12]

एवं

विश्वस्य बान्धवं यन्मोक्षस्य साधकं यत्
गायत्र्च पंचशीलं मम भारतं विजयते।।
आशावादरताया आदर्शोद्घोषणा सुनिपुणायाः
यस्या निखिलापीय वसुधैव कुटुम्बकं भवति।।[13]

*'अभिराज' राजेन्द्र मिश्र रचित **'वाग्वधूटी'** नामक रागकाव्य में **'वन्दे सदा स्वदेशम्'** गीत के अन्तर्गत मातृभूमि की महिमा का गान किया गया है। राष्ट्रानुराग व्यक्त करते हुए कवि ने राष्ट्र के नगरों, नदियों, पर्वतों और राष्ट्रीय ध्वज का स्मरण करते हुए देश के प्रति नमन किया है कि जहाँ माता तुल्य गंगा नदी देश के मस्तक को पवित्र करती है और रेवा (नर्मदा) नदी जो भारत के कटि प्रदेश(मध्यप्रदेश) को पवित्र करती है। ऐसे देश की जय हो, यथा–*

गंगा पुनाति भालं रेवा कटिप्रदेशम्
वन्दे सदा स्वदेशम्
एतादृशं स्वदेशम्।।[14]

***'श्रुतिम्भरा'** नामक गीतिसंग्रह में **'रक्ष मदीयं देशम्'** शीर्षक के अन्तर्गत स्वदेशानुराग स्वाभाविक एवं सजीवता के साथ अभिव्यक्त हुआ है। देश की रक्षा की प्रार्थना करते हुए कवि कहते हैं कि हे परमेश्वर! जाग जाओ ! अब यह सोने का समय नहीं है।*

राष्ट्र की धरती को काल का व्याल घूर रहा है। हे ईश्वर! ऐसा करो कि देश की स्वाधीनता और अखण्डता बनी रहे। हे भगवन् ! मेरे भारत राष्ट्र की रक्षा करो ऐसी प्रार्थना अवेक्षणीय है–

जगन्नाथ! जागृहि परमेश्वर! नयं निद्राकालः
ताम्यति विबुधरत्नगर्भेयं घूर्णति कालव्यालः
स्वाधीनता भवेन्न खण्डिता चिन्तय कमपि विशेषम्।
भगवन् रक्ष मदीयं देशम्।[15]

इसके अतिरिक्त श्रुतिम्भरा के तृतीय खण्ड ***'प्रवास ध्वनिः'*** *के अन्तर्गत* ***'जलधर! नय सन्देशम् !!','महीयसीयं भारतभूमि !!' 'भारतं कीदृशं वर्तते?'*** *आदि गीतों में भी देशभक्ति की भावना प्रस्फुटित हुई है।*

उपसंहार

साहित्यकार जब अपनी कृति की रचना करता है तो उसकी कामना रहती है, कि उसकी कृति को प्रसिद्धि एवं सफलता मिले, किन्तु जब कवि समाज में देखता है कि साहित्य का उत्कर्ष होने के स्थान पर अपकर्ष होता जा रहा है, तबवह कातर स्वर में यही कहता है कि विगत अतीत के साहित्यिक गौरव की स्मृति करो। आचार्य वीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने ***'मेघदूतम्'*** *शीर्षक के अन्तर्गत* ***'साहित्यिक पुनरुत्थान'*** *की चर्चा की है, यथा–*

गते गौरवं भावगम्भीरता शब्दवित्तं प्रभूतं
सुचित्रं तथा वृत्तविस्फूर्जितं सर्वस्मिन् सशोकम्।
रसप्लावितं कल्पनाभास्वरं पुष्कलं मेघदूतं
श्रुतिह्लादनं प्रीणयेच्चामितं मार्मिकं विश्वलोकम्।।[16]

सन्दर्भ

1. *वामन शिवराम आप्टे : संस्कृत हिन्दी कोश, पृष्ठ सं. 1076*
2. *दूर्वा, फरवरी 1994, पृष्ठ सं. 11*
3. *वही पृ.11*
4. *स्वरभारती – पृष्ठ सं. 17*
5. *वही, पृष्ठ सं. 26*
6. *तदेव गगनं सैव धरा – पृष्ठ सं. 35*
7. *वही– पृष्ठ सं. 19*

(MIJ) 2015, Vol No 1, Jan-Dec **e-ISSN: 2454-924X; p-ISSN: 2454-8103**

8. जय भारत भूमे – पृष्ठ सं. 44–45

9. निर्झरिणी – पृष्ठ सं. 90

10. जय भारत भूमे – पृष्ठ सं. 45

11. वही–पृष्ठ सं. 48

12. वही– पृष्ठ सं. 35–36

13. वही– पृष्ठ सं. 50–52

14. वाग्वधूटी – पृष्ठ सं. 12

15. श्रुतिम्भरा – पृष्ठ सं. 54

16. षोडशी – पृष्ठ सं. 20